सिंध-प्रान्त के उत्तखननों में तमिल

- **राम.प. नाचीअप्पन,**
वैज्ञानिक 'ब', एवं
- **जगमोहन**
कनिष्ठ शोध-सहायक

उत्तर पश्चिम भारत एवं वर्तमान पाकिस्तान में स्थित सिंध प्रान्त के अन्तर्गत मोहनजोदड़ों एवं हड़प्पा की वर्ष 1922 से 1927 के बीच खुदाई से प्राचीन सभ्यता के अनेकों अवशेष प्राप्त हुए, जिनसे अतीत के आइने में देखकर पुरातन सभ्यता समझने का अवसर प्राप्त हुआ. अनेक पुरात्तवविदों का मानना है कि मोहन-जोदड़ों एवं हड़प्पा 3500 ई०पू० से 1500 वर्ष ई०पू० विद्यमान थी. इन सभ्यताओं से जुड़े अनेकों ऐसे तथ्यों की जानकारी मिली है जिससे पता चलता है कि सिंध प्रान्त की ये सभ्यताएं आर्यो के आगमन वैदिक काल के पूर्व ही लुप्त हो गई थी. पुरानी सम्यता के अवशेष के रूप में उत्खनन में जो शिलाएं मिली हैं उन शिलालेखों में लगभग 4000 विभिन्न अक्षरों का समावेश है. अभी तक इन शिलालेखों को पूर्ण रूप से पढ़ा नहीं जा सका है. अनेक देशों, जिसमें भारत, फ्रांस एवं फिनलैंड प्रमुख है के पुरातत्वविद, भाषाविद इनकों पढ़ने और समझने में अपना पूर्ण योगदान दे रहे हैं. प्रथम दृष्टया, उपरोक्त 4000 शिलालेखों में मात्र 2290 शिलालेख गहन शोध के लिए प्रयोग में लाये गये हैं. इनमें 419 अलग-अलग अक्षरों का कुल 13,376 बार प्रयोग हुआ है. जिनमें 113 अक्षरों का एक बार, 47 अक्षरों का दो बार, तथा 59 अक्षरों का पाँच बार से कम की पुनरावृत्ति हुई है. 200 अक्षर ऐसे हैं, जिनका प्रयोग बार-बार किया गया है. इन 200 अक्षरीं में पहले 100 अक्षर; दूसरे अन्य 100 अक्षरों से उत्पन्न किये गये हैं. खास बात यह है कि ये अक्षर मिश्री (इज़ीप्शियन) , सुमेरीयन या ब्राहमी से बिल्कुल भिन्न है.

आरम्भिक शोधकों का मानना है कि इन अक्षरों का उद्‌गम सिर्फ आदि प्रचलित द्रविण भाषा ही थी, जो इन शिलालेखों को पढ़ने समझने में अत्यन्त सहायक है. महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि इन शिलालेखों में दिखाए गये अंकों का आधार अंक - 8 से सृजित है. अब यदि मूल तमिल अंक प्रणाली पर ध्यान दें तो आप पायेंगे कि इसमें सिर्फ 7 अंक थे. ' ऐटू' (यानि 8) का मतलब था 'अंक', 'वनबद्धू' (यानि 9) का मतलब था 10 से एक कम और 'पत्तू ' (यानि10) का मतलब था 'बहुत'. इस तरह अंक समय के साथ परिवर्तित हो गये हैं.

इन शिलालेखों में 'मुदल'-'मुदलयी', 'नूरु'-'नोरूकु' आदि ऐसे बहुत से जोडे के रुप में शब्द हैं, जिनके लिए एक जैसे अक्षरों को प्रयोग में लाया गया है. इस तरह के लगभग 100 शिलालेखों को मूल तमिल भाषा से पूर्ण रूप से पढ़ने में सहायता मिली है. ज्ञातव्य हो कि किसी और भाषा से इतने सारे शिलालेखों को नहीं पढ़ा जा सका है. इस तरह मूल तमिल से पढ़े गये कुछ शिलालेखों में 'पन्नारकीर' जिसका अभिप्राय है 'गाना गाने वालो का लक्ष्य' तथा 'अरामान इल पिरिकेयर' जिसका अर्थ है महल जैसा रहने का स्थान. ये अक्षर वास्तव में 'चीनी' अक्षरों जैसा चित्र रुप में वर्णित हैं. इन्हें 'पिक्टोग्राम' अथवा 'लोगोग्राम' कहा जाता है; जिसका उदाहरण नीचे दिया जाता है.

इस पिक्टोग्राम को द्रविण भाषा में 'मीन' कहते हैं [Parpola (1986)] मोहनजोदाडो में पाए गये मटकाओं में यह चित्र तारे के साथ दिखाया गया है.

तमिल भाषा में तारे को 'विनमीन' यानी 'गगन का मछली' कहा जाता है. इसलिए यह चित्र तारे को भी प्रदर्शित करता है. इसी तरह यह 'मीन' के साथ '6' 'अनुधैर्य रेखाओं' को (तीन ऊपर तथा तीन नीचे) मिलाकर 'अरूमीन' कहा जाता है. यह 'अरुमीन', 'वसन्त' एवं 'शीतकालीन' ऋतु के पर्वो में 'ओरियन' के ऊपर देखी जाने वाली तारा समूह को परदर्शित करता है.

इस लेख के अंत में प्रस्तुत संदर्भ (2) के अनुसार पाकिस्तान अधिकृत सिंध प्रान्त में लगभग 7,50,000 लोग अभी भी BRAHUI बोलते हैं जो एक द्रविण भाषा है, यों तो इन्साइक्लोपीडियां ब्रितानिका के अनुसार लगभग 23 द्रविण भाषा जिसमें तमिल, मलयालम, तुलु, कन्नड़, तेलगू, आदि प्रमुख हैं, का उल्लेख है. उत्तर भारत में आदिकाल से प्रचलित द्रविण भाषा किंचित कारणों से लुप्त हो गई है इनमें कुछ भाषाओं का ही प्रयोग कुछ चंद लोगों द्वारा प्रचलन में है.

'द्रविण' या 'द्रमिण' वस्तुतः एक संसकृत शब्द है, जो कतिपय 'तमिल' शब्द का परिवर्तित रुप माना जाता है. अतः आदिकाल की द्रविण भाषा की उत्पत्ति का आधार आदि तमिल होने की अधिक संभावना हो सकती है जिसका शोध वांछित है. हमें आशा है कि शाक्ष्यों का और अध्ययन होनें के उपरान्त सच्चाई लोगों के सामने आनें की संभावाना है.

संदर्भ

1. W.A. Fair Servis Jr. (1983) The Script of Indus Valley Civilization, Scientific American, March, pp. 58-65.
2. Encyclopedia Britanica (1985) The Languages of the World', Macropedia Vol (22), pp. 590-814
3. Jean Francois Jarrige (1972) La CiviliZation de L'Indus' LaRecherche, Paris, Vol-76, pp 245-252
4. Parpola, Asco (1986) The Indus Script: A Challenging Puzzle, World Archeology, Vol 17, (3) pp. 399-419.

* * * * *